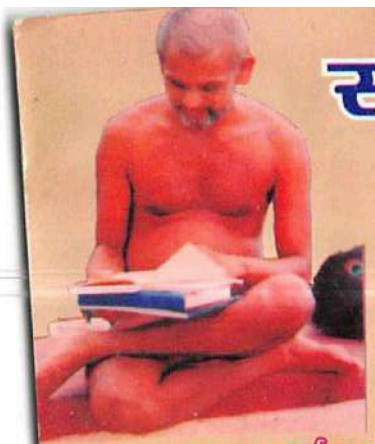

सत्य और सत्यार्थी

"सत्य और सत्यवादी शूली तक पहुँच सकते हैं पहुँचे भी हैं किन्तु सत्य और सत्यार्थी को कभी शूली/फाँसी लगती नहीं है तथा असत्य और असत्यार्थी सिंहासन तक पहुँच सकते हैं, किन्तु सिंहासन पर सुख पूर्वक नहीं बैठ सकते। यदि असत्य सिंहासन पर बैठ गया सिंहासन पर बैठ कर असत्य का सहारा ले तो वह सिंहासन सहित रसातल को चला जाता है। असत्यवादी राजा वसु, सत्यघोष, रावण, कंस की तरह दुर्गति/अधोलोक को ही प्राप्त होते हैं। सत्य चाहे सिंहासन के पास हो या शूली के पास किन्तु वह सत्य-सत्य ही है, असत्य चाहे सिंहासन के पास हो या शूली के पास वह असत्य-असत्य ही रहेगा उसे तीन काल में भी सत्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती। सोना अग्नि में भी सोना है, कागज की पुड़िया में रखा लोहे का टुकड़ा लोहा ही है, रत्न अलमारी में हो या नाली में पर वह रत्न ही कहलायेगा, पर काँच का टुकड़ा भले ही किसी आभूषण में लगाया जाए वह काँच ही है उसमें हीरे के लक्षण नहीं आ सकते हैं।"

उपाध्याय मुनि निर्णय सागर जी महाराज की
विशेष कृति

मीठे प्रवचन

मीठे प्रवचन

लेखक:- उपा० मुनि निर्णय सागर

अक्षरक्षरातीत

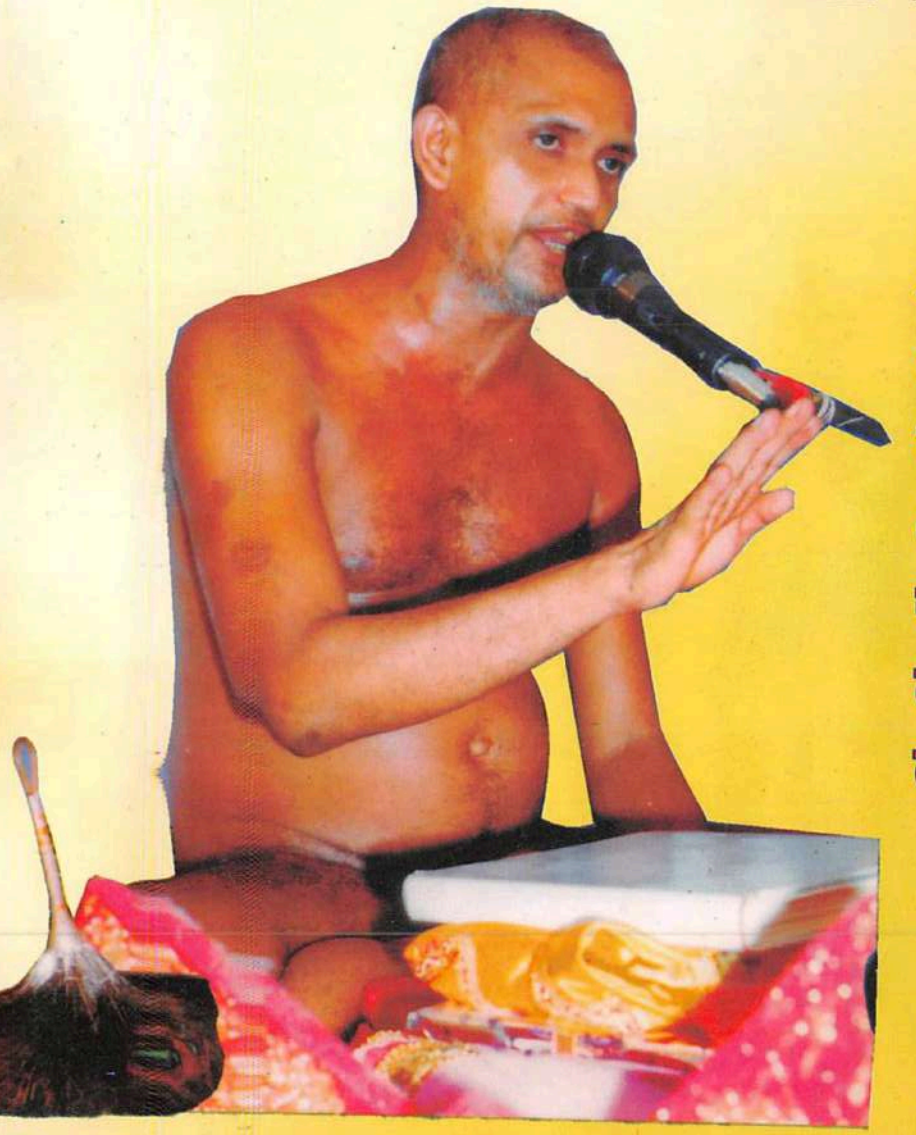

अ
क्ष
र
क्ष
रा
ती
त

लेखक:- उपा० मुनि निर्णय सागर

क्षरातीत अक्षर

लेखक:

उपाध्याय मुनि निर्णय सागर

देहरा–तिजारा (अलवर) में

श्री चन्द्रप्रभ भगवान

की

50 वीं प्रकट तिथि

(स्वर्ण जयंति के अवसर)

पर प्रकाशित

प्रस्तुति निर्ग्रंथ ग्रंथ माला समिति(रजि0) दिल्ली

कृतिः क्षरातीत अक्षर

शुभाशीषः प. पू.राष्ट्र संत, सिद्धांत चक्रवर्ती दि0 जैनाचार्य
श्री 108 विद्यानंद जी महाराज.

लेखकः प. पू. उपाध्याय श्री निर्णय सागर जी महाराज

सहयोगीः मुनि श्री ऐलक जी, छुल्लक जी
एवं संघस्थ सभी त्यागी व्रती

संस्करणः प्रथम संस्करण 2007

प्रतियांः 1108

प्रकाशकः निर्ग्रंथ ग्रंथ माला समिति (रजि0)
कार्यालय कृष्णा नगर दिल्ली

कवर सज्जाः सचिन जैन (निकुंज)
मो. 9219172484, 9997314154

ग्रथांकः 133

प्राप्ति स्थानः श्री निर्ग्रंथ ग्रंथ माला समिति (रजि0)
शाखाः श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर
ऋषभदेव नगर–टूण्डला चौराहा
टूण्डला फिरोजाबाद (उ0प्र0)

प्रस्तुतिः निर्ग्रंथ ग्रन्थमाला

स्वान्तर्गत-ध्वनि

सम्यग्ज्ञान आत्मा का स्वभाव है यह ज्ञान सम्यग्दर्शन का अविनाभावी होकर रहता है। जिसके उत्पन्न होने पर ही जीव की दृष्टि तत्त्वोन्मुखी, आत्मा ग्राही व भेद विज्ञानी बनती है। तत्व दृष्टि के बिना जीव कभी आत्मा की निधि/विभूति से साक्षात्कार नहीं कर सकता। तत्वज्ञान के अभाव में जीव शाश्वत दुःख की अवस्था को ही प्राप्त करता है। वह तत्वज्ञान वृद्धिगत होता है समीचीन शास्त्रों का विधिपूर्वक स्वाध्याय करने से अथवा सत्पुरुषों की संगति करने से।

सम्यग्ज्ञान की उत्पत्ति में कारण होते हैं- जिनशास्त्र व जिनशास्त्रों के ज्ञाता, प्रतिपादक व उनके अनुसार गमनशील रत्नत्रयधारी श्रमण। यूँ तो प्रकृति का प्रत्येक परमाणु तत्वज्ञान व आत्म स्वभाव को प्राप्त कराने में, वैराग्य के प्रकटीकरण में निमित्त बन सकता है, तथापि आगम ग्रन्थों का अध्ययन व अध्यापन, चिंतन-मनन, अनुप्रेक्षा-आम्नाय, धर्मोपदेश आदि निकटतम कारण हैं।

जिनेन्द्र प्रभु की वाणी भावाताप हारिणी है, जन्म-जरा-मृत्यु जैसे महारोगों के लिए परमौषधि रूप हैं, अज्ञानांधकार की विनाशिनी हैं, स्वभाव की प्रकाशिनी है एवं समस्त चैतन्य गुणों की विकासिनी है। यह जिन वचनामृत की धारा कर्मास्रव रूपी शत्रु सेना की निरोधक, आत्म भवन की शोधक एवं आत्म प्रबोधक है।

जिन वचन चाहे किसी भी भाषा में हों, किसी भी शैली में हों, किसी भी पुरुष के द्वारा देय हों ग्राह्य ही हैं, सुखकर व दुःखहर ही होते हैं। जिस प्रकार शक्कर चाहे जहाँ चाहे कैसी भी अर्थात् चाहे जिस प्रकार सेवन करो वह मिष्ट ही होती है। जिन ध्वनि अठारह महाभाषा व सात सौ लघु भाषा रूप मागध जाति के देवों द्वारा समवशरण में भव्य जीवों के लिए प्राप्त होती है। उसे प्रत्येक जीव अपनी-अपनी भाषा में सुनकर लाभान्वित होते हैं।

यह नियामक नहीं है कि धर्मोपदेश- हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, उर्दू, मराठी, अंग्रेजी आदि किसी नियमित भाषा में हो, तभी धर्मोपदेश कहा जाए और यह भी नियामक नहीं कि धर्मोपदेश के ग्रन्थ किसी नियामक छंद में ही लिखे जायें, प्रत्येक प्राणी की रुचि भिन्न-भिन्न होती है। अतः जिस व्यक्ति को जो रुचिकर लगे, उसे आत्मकल्याण हेतु ग्रहण कर सकता है, शर्त यही है कि उससे जीव का कल्याण होना चाहिए, अगर अकल्याण हो गया तो व्यर्थ ही नहीं अनर्थक ही कहलायेगा।

प्रस्तुत कृति "क्षरातीत अक्षर" में कुछ अतुकोकांत क्षणिकायें हैं। इन क्षणिकाओं से भी प्रबुद्ध वर्ग लाभान्वित हो सकता है अगर होना चाहे तो। ये कवितायें या क्षणिकायें अपने परिणामों की विशुद्धि हेतु, अशुभ से बचकर उपयोग को शुद्धोपयोग की भूमिका भूत, शुभोपयोग में स्थिर करने हेतु वर्णवर्तिका से लिप्यासन पर अंकित की थी। इनका प्रयोजन अपने मन को अपने में स्थिर करना ही था और ये अपने तक ही सीमित

थीं किन्तु भक्त लोगों ने उन्हें किसी प्रकार प्राप्त कर पाण्डुलिपि तैयार कर ली और प्रकाशन हेतु प्रेस में दे दी। ये कवितायें या क्षणिकायें पढ़नें के लिए नहीं हैं, कोई पढ़ने को तो इन्हें दो चार घड़ी में पढ़ सकता है, इस प्रकार पढ़ने मात्र से विशेष लाभ नहीं हो सकेगा। इन क्षणिकाओं रूपी चश्मा से स्वयं के स्वभाव का अवलोकन करना है तभी आपके लिए इनकी सार्थकता है।

जब तक शब्दों की गहराई में न पहुँचें तब तक उन शब्दों का स्वाद या शब्दों का अन्तरात्मा से साक्षात्कार नहीं हो सकता। ये क्षणिकायें मात्र सुनने के लिए भी नहीं हैं। इन्हें गुनना है, अन्तरंग में चुनना है, एक-एक क्षणिका को गुनने व चुनने हेतु एक भव भी कम हो सकता है और क्षणार्द्ध का समय भी पर्याप्त है। इन क्षणिकाओं में क्षणिक जीवन की सत्यता का निवास है। ये क्षणिकाऐं क्षरातीत हैं, क्योंकि अक्षरों का कभी क्षय नहीं होता, हमारी आत्मा भी क्षरातीत अक्षर-वत् अक्षर है, अक्षय है, अकथ्य है, अदृश्य है, अश्रव्य है, मात्र अनुभव गम्य है। उसी क्षरातीत अक्षर स्वरूप आत्मा को इसका माध्यम लेकर अनुभव करना है। जैसे पथिक् प्रकाश पुंज, दीपक, मशाल या चिमनी लेकर यात्रा करता है और अपनी मंजिल को प्राप्त कर लेता है।

यदि इन क्षणिकाओं के माध्यम से आपको भी निज शाश्वत स्वभाव, वैभव, निधि या जीवन जीने की जीवंत विधि/तरीका या शैली की प्राप्ति हो जावे तो लेखनी का कृत्य जो लिप्यासन पर नृत्य रूप में हुआ वह सार्थक हो जाएगा। लिखते समय जो निर्मल परिणाम बने उससे लेखक ने भी अपने उस लेखन कार्य के समय को सार्थक ही माना।

प्रस्तुत कृति के प्रकाशन में सहयोगी, पाण्डुलिपि में सहयोगी, संशोधन में सहयोगी-सभी संघस्थ साधुगण, त्यागव्रती व सत्-श्रद्धालु भक्तों व आराधकों को यथायोग्य प्रति वन्दना, समाधिरस्तु व जिनधर्म वृद्धिरस्तु शुभाशीष।

जिनके अशीर्वाद से यह कृति सृजित हुई उन प.पू. राष्ट्रसंत सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य श्री 108 विद्यानंद जी मुनिराज के चरणों में चैतन्यमय समग्र श्रद्धाभक्ति व समर्पण के साथ नमोस्तु करता हुआ इस कृति को भी उनके पावन कर कमलों में समर्पित करता हूँ।

ग्रन्थ प्रकाशक संस्था- श्री निर्ग्रंथ ग्रन्थमाला समिति दिल्ली (पंजीकृत) एवं अपने न्यायोपार्जित द्रव्य का सदुपयोग करने वाले सुधी श्रावक
श्री जय कुमार जैन "सुरभि स्टूडियों" नेमि नगर दमोह (मध्य प्रदेश) सपरिवार को धर्मवृद्धि शुभाशीष/प्रस्तुत कृति से आप सभी लाभान्वित होंगे इसी मंगल भावना के साथ- "सर्वेषां मंगलं भवतु"

ॐ ह्रीं नमः
कश्चिदल्पज्ञ श्रमणः पाठकः
संयमानुक्त जिनचरणाम्बुज चंचरीक
देहरा तिजारा (अलवर)
(राजस्थान)

कब तक करोगे

एक बात पूछूँ?
तुमने जन्म से लेकर
आज तक जो कुछ भी
अर्जित किया है
क्या वास्तव में
वह आपका है?
यदि नहीं तो
पर पदार्थों की
चोरी
तथा अनधिकरण
संग्रह
कब तक
करोगे?
और ये
भी सोचो
कि इससे
तुम्हें
क्या मिलेगा?

प्रायश्चित

क्या तुमने
गलती की हैं?
यदि नहीं की तो
क्षमा याचना क्यों?
यदि हाँ,
तो शाब्दिक
क्षमा याचना का
उपचार क्यों?
तुम्हें अंतरंग में
स्वकीय अपराध का
जो बोध
हुआ है
क्या वह क्षमा याचना
और
सच्चा प्रायश्चित
नहीं है, आज मुझे
अपने अपराध का
यर्थाथ बोध
हो गया है।
क्या ये पर्याप्त
प्रायश्चित नहीं है?

साधुता

जेष्ठ मास की धूप
पौष की सर्दी
सावन की बरसात
क्या तुम?
वृक्षों की तरह
सह
सके हो?
यदि
नहीं तो
साधु जीवन में
सहन शीलता
व साधुता का
दम्भ क्यों?
और सहन भी
कर लिया
तब
भी मान –सम्मान
की
आकांक्षा का
भाव
क्यों?

अतृप्त तृषा

किसी
बर्तन में
जल डालने पर
उसके
पूर्ण
भर जाने पर
जल
बाहर
निकलने
लगता है
काश!
मानव का
मस्तिष्क
भी
ऐसा
होता
तो कभी
कोई
तृषित
क्यों मरता?

अर्जन

अर्जन,
उसका
करो, जिसका
कभी परिमार्जन
और विसर्जन
न करना पड़े
जो वर्जना
तर्जना से
रहित हो,
इतना
जानने के बाद
शायद तुम फिर
किसी का अर्जन ही
नहीं करोगे?
क्योंकि वह तो
पहले से ही
तुम्हारे पास, सभी के पास,
विद्यमान था,
है, और रहेगा
आवश्यकता है केवल
उसे जानने की।

समर्पण

मैंने पूछा
मछली से
कि निस्सीम
सागर में
क्या तुम्हें
भय नहीं
लगता?
उसने कहा
नहीं
क्योंकि
उसने मुझे
सम्यक्
आश्रय
दिया है
और मैंने
किया है
उन्हें
अपना बेशर्त
सम्पूर्ण, समर्पण, समर्पण,
समर्पण॥

विनम्रता

मैंने देखा–
बरसात के
उपरान्त
तालाब, नाली, झील
व नदी
आदि जलाशय
जो कल तक
सूखी पड़े थे,
आज लवालब
हो गये हैं।
किन्तु पर्वत
की चोटी
के पाषाण
ज्यों की त्यों
शुष्क हैं,
काश!
हम भी
होते
इतने
विनम्र ।

निर्लिप्तता

जीव
पुद्गल
धर्म
अधर्म
काल और
आकाश द्रव्य
स्वाश्रित रहता हुआ,
सबको
अवगाहन
देते हुए भी,
कभी
लिप्त नहीं हुआ।
और
ना ही
किसी को
आज तक
लिप्त किया
है
अपने प्रति।
क्या?
यही नहीं है
मेरा
स्वभाव॥

निर्भयता

निस्सीम
आकाश में
उड़ती पतंग
व कुएँ में
पड़ी
रस्सी युक्त
बाल्टी
से मैंने
पूछा–
तुम
इतनी निर्भयता से
निस्सीम
की यात्रा
कैसे कर लेती हो?
उसने
मौन भाषा में
कहा–
मैंने
अपने जीवन
की डोर
अपने स्वामी
के हाथ में
सौंप दी है न।

आश्चर्य

आकाश में उड़ना
जल पर या
अग्नि की शिखाओं
पर चलना
यह कोई आश्चर्य नहीं।
निर्धनता में–
ईमानदारी,
यौवनावस्था में–
युवती के साथ
रह कर भी
निरतिचार
शीलव्रत का पालन,
शास्त्रों का
सम्पूर्ण अध्ययन
कर लेने पर भी–
विनम्रता,
स्व पुरुषार्थ
से सत्ता पाकर भी–परोपकार,
सर्व शक्तिमान
होकर भी क्षमा शील बनना,
यही है
सबसे बड़ा
आश्चर्य॥

ज्योति

बालक के हाथ में
प्रज्वलित दीप
देखकर मैंने पूछा–
वाह! क्या प्रकाश
पुंज दीपक है
तुम्हारे पास।
वह तपाक से बोला
तुम भी अपना
दीप जला लो
मैंने कौतूहल वश
पूछा–
ज्योति कहां से लाये?
उसने फूंक मारकर
दीपक बुझाते हुए
कहा, अब बताओ
वह कहां गई?
वह जहाँ
चली गई
वहीं से मैं
लाया हूँ।
तुम भी वहीं से ले आओ,
मुझे, तब आभास
हुआ अपनी
ज्ञान ज्योति का॥

पात्रता

वर्षा के
उपरान्त
कटोरी, गिलास
थाली, भगौना
बाल्टी
टंकी, ड्रम में
पानी की मात्रा देख–
जिज्ञासा हुई,
वर्षा समान
होने पर भी–
जल, पात्रों में
कम, ज्यादा
क्यों है?
तब
अन्तर से
उत्तर
मुखरित हुआ
प्रकृति कितना भी
दे, किन्तु
मिलेगा उतना ही
जितनी है
जिसकी पात्रता॥

कला

गो वत्स
जंगल में चरता हुआ
कितनी ही दूर
क्यों न निकल जाये
शाम को
स्वतः
अपनी माँ के पास
आ ही जाता है।
काश!
हम भी
अपनी माँ
के पास
अपने घर
जाने की
कला सीख
गये होते
तो
न भटकते
अन्तहीन इस
भव
समुद्र में॥

सम्यक् गति

सागर
नदी के
उद्गम
स्थल से
कितनी ही
दूर क्यों न हो,
आखिर नदी
एक दिन
उसे प्राप्त
कर अपना
सर्वस्व समर्पण
कर ही देती है,
उसे मंजिल
मिल ही
जाती है।
निरन्तर
गतिशील को
कोई भी
मंजिल
असंभव नहीं है,
यदि
सम्यक् गति
है तो॥

अमल

हर सहारा
वे अमल के
वास्ते बेकार है,
आँख ही खोले नहीं तो
कोई उजाला, क्या करे?
नदी किनारे बैठने मात्र से
प्यास नहीं बुझती,
वृक्ष छाया देने
तुम्हारे घर नहीं आयेगा,
ध्वनि सुनने के लिए
माइक की नहीं
खुद के कान खोलने की
आवश्यकता है।
काश! हम आँख खोल लेते,
सब कुछ देख लेते
अपनी तृष्णा को जानकर
पाणि पात्रों से ही सरिता के जल से
प्यास बुझा लेते
तरु तल बैठ कर-छाया पा लेते,
स्व कर्ण खोलकर
स्व ध्वनि को भी सुन लेते॥

अखण्ड

हमने ही, दीवालें
खड़ी करके
सीमा रेखा
बनाकर
अखण्ड को, खण्ड-खण्ड

कर दिया है।
चाहते हैं, अनन्त
अखण्ड, शाश्वत
निज स्वभाव की, उपलब्धि
अनुभूति?
मानव के, टुकड़े-टुकड़े
कर देने पर, उसकी
जीवन्तता, नहीं रह सकेगी
और मुर्दा असमर्थ
ही होता है
कुछ कर सकने में॥

निश्छलता

निर्जन वन में, विभिन्न
जातियों के, वन्य
पशुओं के एक बृहद्
समूह को आपस में
निश्छल स्नेह, करते हुए,
खेलते–कूदते, देख
मन में भाव
आया क्या मानव
एक जाति का होकर
कभी इस तरह
प्रेम–पूर्वक
शान्ति से
क्षण–भर
बैठ सकेगा?.

परोपकार

सरिता, अपने नीर को
मादा, अपने क्षीर को
तरुवर अपने
फल को
कूप अपने
जल को
भवन अपनी
छाया को
मरुत
अपनी काया को
पर हितार्थ–निस्वार्थ
सौंप देते हैं
क्या इतना
महान
परोपकार
कभी मानव
के द्वारा भी
संभव
हो सकेगा?

सार्थक जीवन

नीर हीन जलाशय,
क्षीर हीन मादा,
फल व छाया हीन वृक्ष,
पुष्प व पत्र
रहित पादप,
चेतना हीन शरीर,
क्षमा हीन साधक,
तपहीन तपस्वी, न्यायहीन राजा,
प्राण हीन देही,
बंध्यास्त्री का सौंदर्य,
यदि व्यर्थ, कहा जाता है,
तब सदाचार
मानवता, प्रेम,
उपकार, कृतज्ञता व
संयमहीन,
मानव का जीवन सार्थक
कैसे कहा जा
सकता है?.

तब और अब

उस निर्जन वन में तब
बड़ी शान्ति थी,
जब पुष्पों की
गंध से पूरित पवन,
निर्मल जल का
शीतल झरना,
पक्षियों का मोहक नाद
वृक्षों की सघन छाया
प्राकृतिक सौंदर्य, सब कुछ तो था
किन्तु, अब वहां से
बदबू आती है
वृक्ष कट गये हैं
झरना सूख गया है,
और सुबह से शाम तक
शोर-गुल कलह और
अशान्ति ही अशान्ति है।
क्योंकि अब वहाँ आदमी
बसने लगे हैं॥

मनाने वाला

वह जब रूठ जाता था
तो उसे माँ, मना लेती थी,
प्यार और दुलार
से भोजन भी कराती,
स्वास्थ्य प्रतिकूलता की आशंका से-
से डाक्टर, वैद्य और
हकीम को दिखाती।
जबरदस्ती धोखे से
बतासे में छिपाकर
औषधि भी देती
किन्तु,
वे न ही आज रूठते हैं
न ही भोजन छोड़ते हैं
शायद
अब उन्हें कोई मनाने वाला
नहीं है,
क्योंकि
उनकी माँ नहीं है॥

कहानी मानव जाति की

जब तक नदी
दो किनारों
के मध्य अनुशासित
रूप से बहती है,
तब तक
उसकी गति में
कोई विरोध
नहीं होता।
जल की अधिकता से
जहाँ किनारों
का उल्लंघन
हुआ कि
वह पथ भ्रष्ट
हो संहारक
व पथच्युता
हो जाती है॥
शायद
मानव जाति की भी
तो यही, कहानी है।

विकास

जिसे तुम, पिछड़ा युग, कहते हो,
उस समय, श्याम पट्टिका पर
धवल वर्तिका से वर्णांकित
करते थे, किन्तु आज
विकास शील युग, में धवल
लिप्यासन पर, वर्ण वर्तिका से
श्याम अक्षर, अंकित कर
रहे हैं।
लिप्यासन धवल
है या श्याम
सवाल यह नहीं
महत्व, इस बात का है कि
हमने धवल मसि के स्थान पर
श्याम मसि से
धवल पत्रों को
पोतना शुरू कर दिया है,
क्या यही है–
इस युग का विकास,
सभ्यता और
संस्कृति का संवर्धन?

कांक्षा-बांछा

शायद प्रत्येक
मानव के मन में
गुप्त और सुप्त
महत्वकांक्षाएं
व बांछाऐं
विद्यमान
रहती हैं,
क्या कोई
ऐसा भी है
जो बांछा
और कांछा
से रहित हो
जिसे नाम,
दाम, काम, वाम
और राम की भी
कांक्षा न हो।

लक्ष्य

जो
छोड़कर
सुबह-शाम
बढ़ता है
अविराम,
उसी को
मिलता है
शाश्वत
धाम।
चिर विश्राम,
स्वाश्रित
गाम,
अनाम, अकाम
अदाम॥

उपलब्धि

मुझ से किसी ने मेरी साधना की
फलोपलब्धि के बारे में पूछा-
तब मैंने कहा- ऐसा मैंने कुछ नहीं पाया
जो तुम्हें दिखा सकूं,
किन्तु हाँ,
कुछ खोया जरूर है।
वह है
कषाय की तीव्रता,
क्रोधादि का उत्कर्ष,
विषयों की आसक्ति,
मनोरंजन की
पाप रूप प्रवृति।
कलह, विद्वेष
राग की प्रगाढ़ता,
झूठी आत्म प्रशंसा से
प्राप्त होने वाली खुशी॥
तथा सत्य को
सुनकर उद्‌गमित
होने वाला
संक्लेश परिणाम।
और कुछ पाने
एवं छुपाने का लोभ॥

अन्तिम मंजिल

उस पड़ाव से
आगे बढ़ते समय
मैं भयभीत था,
न जाने मार्ग में
क्या-क्या
प्रतिकूलताऐं मिलेंगी
मेरा कुछ छिन न जाये,
साथी कोई होगा, या नहीं
किन्तु आज यहां-
जो मिल गया है, मुझे
लगता है- इसी की खोज
में तो अंत हीन यात्रा
कई बार कर
चुका हूँ।
अब न कहीं जाना है,
न कुछ पाना है,
मेरी मंजिल व
उपलब्धि मैं खुद को
खुद में समा करके
पा चुका हूँ॥

अधूरी साधना

किसी ने उनसे कहा
तुम बड़े साधक हो
महा तपस्वी हो
तुम्हारे जैसा पुण्यात्मा
दूसरा कहाँ है?
आत्मा का ध्यान भी
तो तुम निरन्तर
ही करते हो।
नाम की चाह तो, कोसों दूर है
उदारता व त्याग का
कोई दूसरा उदाहरण भी नहीं॥
मुझे ही नहीं
सभी को लगा
यह उनकी यथार्थ स्तुति है।
उन्होंने भी यह सब
समता भाव से मौन पूर्वक सुना,
किन्तु, उनकी आँखों में
मुझे अपूर्व चमक दिखी
तब मुझे लगा
शायद उनकी
साधना
अभी भी अधूरी है॥

सुरक्षित

आज मैंने
समस्त दीवालों को,
छत और
चार दीवालियों को,
सुरक्षा कर्मियों को,
स्वकृत पुरुषार्थ
व पुण्य कृत्यों को,
सर्व रागान्वित-
परिणामों को भी,
दूर हटा दिया है।
अब मैं, अपने-आपको
नितांत-असहाय, एकत्व
अनुभव करता हुआ
परम सुरक्षित आनंदित
अनुभव कर रहा हूँ॥

पूर्णत्व की साधना

अपने लिए धनादि जोड़ना
अपने से पर को जोड़ना
अपने लिए छोड़ना
दूसरों के हितार्थ छोड़ना
अपने अहित कर्ताओं को छोड़ना
अपने स्वार्थ हेतु छोड़ना
अपनी सुरक्षा में दौड़ना
सुरक्षा करने में दौड़ना
अपने लिए पथ मोड़ना
या अपने लिए, दूसरों को मोड़ना
सर्वात्म हित की साधना
पूर्णता नहीं। जहाँ,
जोड़ने–छोड़ने, तोड़ने–मोड़ने
और दौड़ने का न संकल्प है
न बंचना और न ही मनोविचार।
उस निर्विकल्पता में
आत्मा को आत्मा में,
आत्मा की
उपलब्धि होती है,
और आप मानो या न मानो
यही है स्वत्व के
पूर्णत्व की साधना॥

निज वैभव

जब-जब अपनी दृष्टि को
बाहर की ओर
ले जाता हूँ
तो उन पदार्थों को
ग्रहण करने का
अथवा
उनके स्वरूप को बदलने
या उन्हें दूर
फैंकने का भाव
प्रकट हो ही
जाता है,
किन्तु जब दृष्टि को
अन्दर में ले जाता हूँ
तब लगता है
उन सभी की
आवश्यकता ही नहीं है,
जो चाहिए वह सब
अन्दर ही तो है॥

प्रतिबिम्ब

अभी तक
काँच के
टुकड़े में
सागर के जल में
अथवा किसी के
नयनों में
झांक कर
अपने प्रतिबिम्ब
को देखा है
काश! तुम
स्वांतर्गत में
झांक कर
अपने बिम्ब
को देख लेते
तब शायद
प्रतिबिम्ब
के पीछे
पागल बने
न फिरते॥

अपने चित्त को

स्वयं का
प्रतिबिम्ब
शान्त निर्मल
जल में
अथवा अखण्ड
दर्पण में
या वात्सल्य
युक्त नयनों में
ही दिख सकता है।
मलिन, सचल व खण्डों
में नहीं
यदि
ऐसा ही है तो
तुम भी
अपने चित्त को
निर्मल, शान्त
अखण्ड व
स्निनग्ध
क्यों नहीं
बना लेते।

साधक का क्या दोष

रवि का कार्य तो
मात्र प्रकाश देना है,
उस प्रकाश से
किस का जीवन
विकसित हुआ?
कौन मुरझाया?
और कौन
संतापित हुआ?
इसका ख्याल
रवि कहाँ रखता है?
किन्तु साधक तो
चन्द्र चाँदनीवत्
होकर, सभी का संताप
हरने वाले होते हैं
कुमुदनी को
विकसित
करने वाले सुधाकर को देख
कोई मनः पद्म
स्वतः ही
मुरझा जाये
तो, इसमें शांति स्वभावी
साधक का क्या दोष?

यथार्थता व साम्यता

मिट्टी, धूल,
बालू में
खेलते बच्चे
घरौंदे बना
रहे हैं।
खेलने के बाद
उन्हें मिटाकर
या बिना मिटाए
छोड़ कर जा रहे हैं॥
कल फिर यहीं
खेलने आयेंगे,
इन्हें मिटायेंगे,
और फिर घरौंदे बनायेंगे।
हम बड़े हो गये हैं
इसलिए उनके इस
खेल को देखकर
हँसते हैं,
क्या हमारे खेलों की भी
इतनी ही यथार्थता
व साम्यता नहीं है?

पीसना और चीखना

मैंने चलती चक्की से पूछा
बेरहमी से पीसती है,
सुने बिना ही
इसमें क्या राज है?
जब मैं पीसती नहीं थी
और चीखी भी बहुत।
किसी ने नहीं सुनी॥
खुद कर लिया,
दया दिखाती है
जो दूसरों को
और दूसरों की चीख
चीखता है॥

तू दूसरों को
और दूसरों की चीख
जोर से चीखती है।
उसने कहा–
तब खूब पिसी,
किन्तु मेरी चीख
अब मैंने भी वह काम
क्योंकि दुनिया उसी पर
सांत्वना देती है,
पीसता है,
दबाने हेतु जोर से

अपने घर

आग तो
लगा आये
पूर शहर में,
क्या तुमने ये भी
सोचा है
अपने घर
किस रास्ते से जाओगे?
और अपने घर को भी
कैसे बचा पाओगे?
तुम्हारा घर
भी तो
इसी इंसानियत
की बस्ती में है।
भले ही अब
पूर्ण भग्न पड़ा है
किन्तु, कल तो
बहुत सुन्दर
और मोहक था,
क्या तुमने ही
उसकी यह
दुर्दशा नहीं
की है?

बरबाद

दूसरों के भवनों
पर पत्थर और बम
बरसाने वाले,
क्या तुमने खुद के बारे
में भी सोचा है?
क्या तू नहीं जानता,
जिनके घर काँच
के होते हैं,
वे ये सब काम
नहीं किया करते।
फिर तुम क्यों
तुले हो दूसरों को
बरबाद करने पर?
क्या इससे तुम
आबाद और आजाद
हो जाओगे?

विराट्ता को पाने हेतु

गिरि से गिरती सरिता ने
गिरने के मार्ग में व्यवधान
व मान-सम्मान की बात को
भूलकर, सागर में-
निस्वार्थ और बिना शर्त का
समर्पण किया।
और न ही कोई शिकायत की
उस महासागर से
न ही अहम् का
पोषण किया॥
और न ही सागर के लघु
व विशाल खारेपन को
दोष दिया अपितु वह तो
अपना सौभाग्य मान
परमानंद से युक्त
हो, उसमें समा गई।
क्या? ऐसा
हम नहीं कर सकते
महा सागर बनने
के लिए॥

जो करेगा

जब-जब मेरे मन में
दूसरे के प्रति
भला या बुरा
करने का
भाव आया।
तब-तब मैंने
स्वप्न में वैसा ही
खुद के लिए पाया॥
क्या सचमुच में
हमें
अपने ही किये
का फल मिलता है?
हाँ,
तभी तो कहा है-
जैसा बोओगे
वैसा ही पाओगे।
जो करेगा
सो ही भरेगा॥

भटकी किरण

घर में जलते दीपक की
एक किरण खिड़की से
बाहर झांकती हुई दिखी–
तब तक अंधेरा आ गया
और दीपक की वह किरण भी
दीपक बुझ जाने से कहीं खो गई।
तब से आज तक घर के बाहर
उसी किरण को खोज रहा हूँ॥
किन्तु लगता है वह अंधेरे में
मार्ग में भटक गई होगी।
तभी पीछे से आवाज आई
मार्ग वह नहीं, तुम भटके हो॥
घर में जाओ अपना दीया जलाओ,
तुम्हें हजारों किरण मिल जायेंगी।
और अनेकों बुझे
दीपकों को जलायेंगी॥
और बहुत सारा अंधेरा
मिटाने में समर्थ हो जायेंगी।
किन्तु ये सब तभी संभव है
जब तुम अपने घर में
अनन्त ज्ञान का शाश्वत
दीप जलाओगे॥

सहयोगी

उसने मुझे
धक्का दिया,
और खुद के
प्रमाद से
मैं नीचे
गिर पड़ा।
किन्तु अब
मैं पहाड़
पर चढ़
रहा हूँ,
तो कोई
सहारा देने
नहीं आता॥
हाँ? अभी भी नीचे
वाले टाँग
खींचने
को तैयार हैं,
और मौका
पाकर टाँग
खींचते भी हैं वे॥

मंजिल

किसी को
घर से
बाहर निकलते
ही मिल गई
अनाड़ी को
भूली-बिसरी
अपनी ही मंजिल।
कई ऐसे
भी तो हैं
इस जहान में
जो अपनी
मंजिल को
पाने, खोजने
के लिए
आज तक
भटक
रहे हैं
अंधेरे में ही।

एक भक्त ने पूछा

तुम तो सर्वत्र
विहार करते हो
सबसे अच्छा
स्थान तुम्हें
कौन सा लगा?
मैंने कहा–
उत्तर तुम
अपने मन का
चाहते हो या यथार्थ,
उसने कहा–
दोनों ही कह दो
तब मैंने कहा–
तुम्हारे मन का उत्तर है
तुम्हारा ग्राम,
और यथार्थ है
मेरा निर्मल चित्त।
स्वकीय
निर्मल आत्मा
जो सबसे श्रेष्ठ है
शाश्वत है और
पूर्ण सुरक्षित भी।

दीपक

चन्द्रमा भले ही
तारों के साथ निकलता हो
किन्तु सूर्य
तो क्षितिज पर
अकेला ही
बढ़ता है और
दीपक भी तो रात के
अंधकार से अकेला
ही लड़ता है॥
तभी तो निशांत में
दिनकर को पाता है।
क्या यह सत्य नहीं है
निस्सीम अंधकार में
एक जाज्वल्यवान
दीपक पर्याप्त है॥
क्योंकि, अंधकारों का
समूह भी उसे बुझा
नहीं सकता, वह
जब भी बुझेगा
तब स्निग्धता के अभाव में
या वायु के आतंक से॥

क्षरातीत-अक्षर

किसी ने पूछा- तुम्हारी इन
दिवसैक रचित कविताओं में-
क्या है? कुछ भी तो नहीं है
सिवाय अक्षरों के।
मैंने कहा-जी हाँ,
तुम ठीक कहते हो,
कुछ भी नहीं है
बिना नयन के-
पूरे जहान में,
कुछ भी तो नहीं है
तथा जिसके पास नयन हैं
उसके लिए तो नयनों
में भी जहान है।
इसी तरह मुझे इन
कविताओं में सब कुछ
दिखता है जो अन्यत्र आज
तक कहीं नहीं दिखा
वह है अक्षरों का
क्षरण रहित का समूह
वही तो मुझे चाहिए था
शायद तुम्हें भी।

पुरानी आदत

मरने के बाद लोगों ने उन्हें
अरिहंत नाम सत्य है
सिद्ध नाम सत्य है,
सुनाया, हृदय पर घी
का कटोरा रखा,
पानी भी दिया
अश्रुपूरित नेत्रों से
दी मुखाग्नि भी॥
इतना ही नहीं
एक सभा बुलाकर
शोक संवेदना प्रकट
करते हुए, श्रद्धांजलि
भी अर्पित की चित्र के सामने
दीप जलाया, माला पहनाई।
और फूल भी चढ़ाये॥
कुछ दिनों के बाद
उनकी पुस्तक भी
छपकर आ गई।
ये सब सामान लोगों ने उसके
जीवित रहने पर क्यों नहीं किया?
शायद इसलिए कि मुर्दा व्यक्ति को मुर्दों को
पूजने की पुरानी आदत
जो पड़ी है न॥

सुख-दुःख

उन्होंने दूसरों को कुछ
देते देखा तथा किसी से
लेते देखा तो, वे आनन्द से
नाच उठे।
किसी को कुछ उपलब्धि हुई
तो वे झूम उठे॥
दूसरी ओर ये हैं
जो दूसरों को अभाव ग्रस्त
और दुःखी देखकर,
संतुष्ट होते हैं।
तथा दूसरों की सुख-शांति
उन्हें खलती है-चुभती है
उन्हें दुःखी करती है॥
तुम उनकी श्रेणी में
आते हो या इनकी श्रेणी में।
तुम्हें दूसरों की
उपलब्धि से आनन्दानुभूति नहीं होती
तब अपने सुख में दूसरों के आनंदित
होने की कल्पना ही
क्यों करते हो?

मृत्यु महोत्सव

वे जीवन भर, मृत्यु के भय से
दुःखी रहे और
आज मरते क्षण
जीवन–जीने की
आशा में दुःखी हैं।
न वे जीवन का आनंद
ले सके, न मरण का सुख॥
और दूसरी ओर हैं
वे दिगम्बर संत/हम
जो जीवन भर
मरण को भगा कर
शान्ति से जीऐं।
और शान्ति दूत
बनकर आनंद लुटाया,
मरते दम भी मृत्यु
की, मृत्यु करने हेतु
अजन्मे बनने की
खुशी में परम्
आनंदित होते रहे
तभी तो उनकी मृत्यु
बन जाती है
समाधि महोत्सव॥

ये और वे

वे जन्म से लेकर,
आज तक
जिन्दगी भर रोते रहे।
और अपने
आश्रित व आश्रय-
दाता को भी रुलाते रहे॥
आज मरने के
उपरान्त भी तो
उनके गृह-परिवारीजन
आश्रित व आश्रयदाता
रो रहे हैं,
विलख रहे हैं, चीख रहे हैं।
किन्तु दूसरी ओर ये भी हैं
जो जीवन भर
आनंद लुटाते रहे
आश्रित व आश्रयदाता भी
पाकर सौभाग्य मनाते रहे
आज उनके बाद भी
उनकी याद में घी के दीपक
जला रहे हैं सब-कुछ
खा-पीकर नृत्य गान कर
खुशियाँ मना रहे हैं॥

उनकी चाह

तुम उनकी अर्थी में
अर्थ लगाओ,
इसके पहले ही
वे शिवार्थी बन
परम अर्थ पाना
चाहते हैं,
तुम उनकी चिता जलाओ
उसके पहले ही
अपने चित्त में
शाश्वत ज्ञान दीप
जलाना चाहते हैं।
तुम उन्हें कन्धे पे उठाओ
इसके पूर्व ही वे
पांच हजार धनुष
अथवा सात राजू
ऊँचा उठ जाना
चाहते हैं और
जाना चाहते हैं
वहाँ, जहाँ से
कभी लौटकर
वापस नहीं आना पड़े
और जाकर भी
पछताना न पड़े।

नूतन जीवन

यदि वृक्षों पर
पतझड़ न हो,
न पत्ते और न
पुष्प आयें
तो उनके जीवन में
बसन्त भी
नहीं आ सकेगा।
पतझड़
बसन्त का कारण है,
क्या इसी तरह
मृत्यु को
नूतन जीवन का
कारण नहीं
मानना चाहिए॥
यदि ऐसा ही है
तो क्यों
घबराते हो?
क्यों डरते हो?
जीवन में
नूतन बसन्त के
आगमन के शुभ
कारणों से॥

नंदा दीप

जब तुम
अंधकार से
भयभीत
रहते हो
तब तुम
अपने पास
एक दीपक
जला लेते हो
क्या तुम्हें
अन्दर के अंधकार से
भय नहीं लगता?
यदि भय लगता है
और अंधकार
में जीना नहीं
चाहते तो
अपने अन्दर
ज्ञान का
नंदादीप
क्यों नहीं
जला लेते?

जोड़ा भी नहीं जोड़ा

लोग उसे कहते थे हँसोड़ा
इस उच्च पद पर
आसीन होकर भी
उन्होंने अपने लिए
पूरे जीवन में
एक धोती का
जोड़ा भी नहीं जोड़ा,
उन्होंने सदैव
दिया ज्यादा, लिया थोड़ा,
न उन्होंने कभी आगम को मोड़ा
और न कभी न्याय-नीति व
धर्म का मार्ग ही छोड़ा
उन्होंने जब-जब भी मारा
अन्याय, अनीति, अत्याचार पर कोड़ा
तब-तब उनके ही साथियों ने अथवा
अपनों ने ही उन्हें बार-बार फोड़ा
फिर भी उन्होंने नहीं छोड़ा
बुराई पर मारना कोड़ा
इसलिए तो जनता ने आज उनकी
याद में सेवा सम्मान में
यह समारोह जोड़ा।

वही हूँ मैं

मैंने अनादि काल से
आज तक
बहुत पढ़ा,
सुना, सीखा,
जाना, समझा,
चिन्तन किया,
देखा है और
अनुभव भी
अनेक किये
किन्तु फिर भी
आज यह आभास
होता है
कुछ अश्रुत,
अदृश्य
अगम्य, अननुभूत
रह गया है।
जब मैं स्वयं में
स्थिर होकर
देखता हूँ तो
पाता हूँ
वही तो हूँ मैं।

परखो

जिसे दौड़कर
चलकर
भटक कर
गिर कर, उठ कर
किसी भी
तरह नहीं
पा सके,
उसे पाने के
लिए अब अंतिम
एक ही उपाय शेष है,
स्वयं में ठहरकर,
निज में समा कर,
दूसरों को त्याग कर,
स्व के अलावा
सब कुछ
को जलाकर।
गर स्व को पाना है
तो उसकी पहली
शर्त है परखो।
पर-खो, पर-खो॥

भ्रम

किसी के एक आँसू पर
हजारों दिल तड़फते हैं,
किसी का जिन्दगी
भर रोना भी
बेकार जाता है।
यह कहने वाले भी
गहरे भ्रमतम में
डूबे हैं, शायद उन्हें नहीं मालूम
इस दुनिया में कोई
किसी के लिए नहीं जीता॥
और न मरता है,
हर प्राणी अपने लिए
जीता है,
और अपने लिए
ही मरता है।
तुम यदि भ्रम में
जी रहे हो तो
इस भ्रम को दूर कर लो
जिससे तुम सत्य को पा सको,
फिर भविष्य में तुम्हें
रोना नहीं पड़ेगा॥

विरोधी तत्व

सूर्य और चाँद
क्वचित्-कदाचित्
भी सकते हैं,
विषयाशक्ति
एक साथ
चल सकते
एक राही
पर गमन
एक सुई उभय
नहीं कर सकती।

तो क्षितिज पर
एक साथ दिख
किन्तु
और वैराग्य
वैसे ही नहीं
जिस प्रकार
दो मार्गों
नहीं कर सकता,
दिशा में सिलाई

स्वात्मोलब्धि

जो कुछ भी
संसार में प्राप्तव्य है
वह सब कुछ
पैसे से,
खुशामद से,
भेंट या
उपहार से
या वसीयत
व भीख
से भी नहीं
पाया जा सकता है
दवाब व प्रार्थना से भी
सभी की पूर्ति असंभव है
जो कुछ अनुपम व
शाश्वत स्वकीय, प्राकृतिक है
उसे तो अपने अन्दर ही
अनुभव किया
जा सकता है
बाहर लिया व
दिया जाना
सम्भव नहीं है।

आदर्श कौन?

गन्दे जल में
किसी को भी
अपना चेहरा
साफ नजर
नहीं आता
जब कि साफ जल में
वही चेहरा स्पष्ट
झलकता है
ऐसा क्यों होता है?
शायद यही
कहने के लिए
कि आदर्श वही हो सकता है
जो अन्तर्बाह्य उभय रूप
से निर्मल हो
इतना ही नहीं उसमें
निर्मलता के साथ-साथ
शान्ति की भी परमावश्यकता है
क्या ये एक-दूसरे
के पूरक नहीं हैं?
मलिन और उत्तेजित
सफल आदर्श नहीं हो सकता।

श्याम वदन

चन्द्र बिम्ब में पड़े
काले धब्बों
की चर्चा
किसी गर्त में पड़े
मेंढ़क भी
कर लेते हैं,
किन्तु तारों के श्याम
धब्बों की चर्चा
आज तक देवों
ने भी नहीं की।
और न ही
उसका किसी
आगम में जिक्र किया है,
इसका कारण
क्या है? क्या उसमें दाग नहीं है?
या बड़ों लोगों के
छोटे दाग या दोष भी नहीं छुपते,
अथवा अपराधी/गुनाहगारों
की निंदा करने का
सबको अधिकार है॥

बहिर्दृष्टि-अन्तर्दृष्टि

जब-जब मैं
दुनिया की
तरफ मुँह करके
हाथ फैलाकर चला,
तब-तब
दुनिया ने मुझे दुत्कारा,
खदेड़ा और भगाया।
आज दुनिया की तरफ
पीठ करके दौड़ रहा हूँ
अर्जित भौतिक वैभव
को छोड़ रहा हूँ
तो सारी दुनिया मेरे पीछे
दौड़ती सी
दिख रही है॥
प्रत्येक सबल शक्ति
मुझे अपने
में समेटकर
बांध लेना चाहती है।
देखा! दृष्टि के बदलने से
पूरी सृष्टि ही
बदली-बदली दिखने लगी॥

गुरु नहीं शिष्य

अनेक मूर्ख शिष्यों का
गुरु बनने की
अपेक्षा अच्छा है
एक अच्छे और
सच्चे गुरु
के आदर्श
शिष्य बनें,
जिससे
प्राप्त हो सके, सम्यक् मंजिल,
परम पुरुषार्थ का
सम्पूर्ण फल।
इसके विपरीत
दशा से
बनता है व्यक्ति
क्षणिक सम्मान का
पात्र व
दीर्घ कालीन
उपहास
दुःख व संत्रास
का भोक्ता॥

हृदय की जिंदगी

समर्पण, वह राजे
हकीकत है जो
समझ में
तो आती है
पर समझाई
नहीं जाती,
इस भाषा को
पढ़ने वाले
बहुत कम
ही होते हैं।
हाँ, यह बात अवश्य है
पदवीधारी अधिकाशतः
असफल हो
जाते हैं,
तथा शब्द–वर्ण–अक्षर
मात्रा के ज्ञान
से रहित
हृदय से
जीने वाले
अक्सर श्रेष्ठ रूप में
होते हैं उत्तीर्ण॥

कथ्य-अकथ्य

कई बार ही नहीं-
हर बार,
हमने उनसे
जो जी चाहा
कहना चाहा,
वह कभी कह
नहीं पाये,
और जिस-जिस
को नहीं कहना
या छुपाना था
उसी-उसी
को कह आये।
उनसे हमारा
अति.....
आत्मीय
सम्बन्ध है,
तभी तो
बुद्धिमान
मनुष्य से
ऐसा होना
असम्भव ही है।

प्राकृतिक रूप

प्राकृतिक वातावरण में
निरावरण खेलते बच्चों को,
सरिता, वृक्ष, पर्वत, वसुधा व
व्योम को देखता हूँ
तब मेरा मन भी उनके
साथ खेलने को
मचलता है
तब लगता है
मैं बड़ा हो गया हूँ
बालक वत्–निरावरण
कैसे बनूं, कैसे होऊँ
अंतरंग की
वासनाओं से रिक्त,
तभी आत्म बोध की
आकाश वाणी सुनाई पड़ती है
प्रकृति के साथ जीने व
खेलने के लिए प्राकृतिक
रूप में लौट जाना
जरूरी ही नहीं
अनिवार्य भी होता है
क्या तुम्हें यह स्वीकार्य है?

दृष्टि कोण

वही पहले
एक दिखता था
अब अनेक।
पहले सुंदर था
अब असुंदर।
पहले शाश्वत था अब अनित्य
पहले मेरा लगता था,
अब सभी का,
पहले किसी का था–
अब किसी
का नहीं
ये सब क्यों
होता है?
क्या वस्तु ही
इतने रूप
बदलती है,
नहीं! व्यक्ति का
दृष्टिकोंण भी।

सोना–जागना

आप ऐसे बनो
जिनका निरन्तर जागना
विश्व के हित में
बहुत जरूरी है
काश! ऐसे नहीं
बन सको तो
ऐसे ही बने रहो
जिनका सोना ही
मानव कल्याण
देशोन्नति व
प्राणीमात्र के लिए
हितकर हो, किन्तु
एक बात
ध्यान रखना
कभी भूल कर भी
जागने की
कोशिश
मत करना
तब तक कि
जब तक
तुम जागने
लायक नहीं हो।

क्षरणाक्षर

अक्षर ज्ञान पर
घमण्ड क्यों?
वह अक्षर भी
क्षरण से रहित
वह अक्षर नहीं है,
संज्ञा होते हुए भी
क्षरण शील है,
बिजली के
जाते ही
जैसे अंधकार
छा जाता है
उसी प्रकार
ज्ञानवरणी कर्म के
उदय से
तीव्र क्षयोपशम
वाले भी अज्ञानी हो जाते हैं
यदि तुम कभी भी
अज्ञानी नहीं
बनना चाहते हो
तो ज्ञानवरणी कर्म का
समूल क्षय क्यों नहीं कर देते?

जीवन

जीवन खिलवाड़
की नहीं
कल्याण की
वस्तु है,
इसका उपहास
मत कराओ
इसे सफल
और
सार्थक
करने में
प्रयत्नशील रहो,
यह भारभूत
नहीं
तीन
लोक में
सारभूत है।

दुःख–दर्द

दुःख के
पुरुषार्थ के
पवन से
बिखर तो
किन्तु बिना
नष्ट

श्याम घन
पुरजोर
इधर–उधर
जाते हैं
बरसे
नहीं होते।

झलक

आत्मानंद का
प्रखर तेज
किन्तु
श्याम घनों
पूरी तरह
अपने अस्तित्व का,
उसमें से
आत्मानंद की
कौंधती है।

आदित्य-
युक्त तो है
वासना के
ने उसे
ढक दिया है,
बोध कराने तभी तो
बिजली सी
झलक

परिचय-पत्र

खुद को
भूलकर
दूसरों का
परिचय व
परिचय पत्र
प्राप्त
करके भी
क्या तुम
निज का
गंतव्य
पा
सकोगे?

उतार-चढ़ाव

उतार-चढ़ाव
से युक्त
जिन्दगी
सरिता की
तरह
उतारती
चढ़ाती है
कभी
डुबाती है
तो कभी
सूख जाती है
समधारा की
जिन्दगी
क्यों नहीं
जी लेते?
स्वभाव
ही तो
समभाव है
सिद्धों की
तरह।

ऐसा नीर

दो चुल्लू जल ने
कण्ठ को तो
तर कर दिया
उदर को भी
भर दिया
काश! तृष्णा से
तृषित कण्ठ को
मन के पिपासु
उदर को
भरने वाला
भी
जल कहीं होता
तब कोई
तुम्हारी तरह
प्यासा ही
क्यों मरता?

स्वत्व बोध

अस्तित्व
के बिना
स्वत्व का
व्यक्ति के
बिना
व्यक्तित्व का
न तो
बोध होता
न ही शोध,
क्या कभी
कर्ता के बिना
कर्तव्य
की सृष्टि
सृजित
हुई है या
हो सकेगी?

हिसाब किसका?

क्या सदैव यही हिसाब
लगाओगे?
ऊँगलियों पर
गिनते जाओगे
कि मैंने कितना
दान किया,
उपवास किया,
अच्छे पुण्य
कार्य किये
एक बार अपने-
उपकारियों का ,
आश्रयदाताओं का, '
उद्धारकों का,
लेनदारों का,
तथा बुराइयों का;
भी हिसाब लगा लिया होता
तो, शायद तुम
मान के हिमालय पर
सवार हो ऐसे
नहीं दहाड़ते।

यही प्रक्रिया है

मैंने
परमात्मा बनने के
मार्ग को बहुत खोजा,
सुना, पढ़ा, अनुभव किया
और आगे भी बढ़ा
किन्तु अभी तक
परमात्मा नहीं बन सका
और इस पद दलित
पाषाण को कुशल शिल्पी
ने काट-छाँट कर
तराश कर, एक रूप दे
दिया और कर दी प्रतिष्ठा
किसी आचार्य ने।
आज भगवान्
बना बैठा है
जब मैंने उसे श्रद्धा से
मस्तक झुकाया
तब अतंस
से आवाज आयी अरे मीत!
भूलते क्यों हो परमात्मा
बनने की यही प्रक्रिया है।

उपकार

अरे! तुम
किस-किस
का उपकार
चुकाओगे?
तुम्हारे लिए जिनने
अनंत उपकार किये
क्या तुम
उनके नाम
भी जानते हो?
पृथ्वी, जल,
अग्नि, वायु,
वनस्पति, आकाश, काल,
पुद्गल, धर्म, अधर्म व
अनंत जीव द्रव्य।

वह कौन है?

क्रोध को अग्नि
मान को जहर
माया को ठगिनी
लोभ को
पाप का बाप
कहा जाता है,
क्या कभी
सोचा है आपने
वह कौन है?
जो इन
सभी का
उत्पादक
पलिपालक, संवर्धक व
संरक्षक है?

स्वभाव का प्रभाव

अग्नि शीतल नहीं होती,
पाषाण-नवनीत घत्
कोमल नहीं होता,
जल अपनी शीतलता
नहीं छोड़ता
क्या इससे सिद्ध नहीं होता
कि कोई भी द्रव्य अपना
स्वभाव नहीं छोड़ता है।
तब तुम क्यों अपना
स्वभाव छोड़ने में तत्पर हो,
अरे वह सामने वाला अपनी
गलती स्वीकार नहीं करेगा,
वह तो दुष्ट है ही
क्या तुम भी?
नहीं तो फिर
स्वभाव में रहो
तुम्हारे स्वभाव में
रहने के प्रभाव से
क्या वह भी स्वभाव को
प्राप्त करने की प्रेरणा
नहीं ले सकेगा?

चित्त प्रकाश

स्वात्म बोध का
अभाव ही
पर के प्रति
आकर्षण व
आसक्ति का
कारण है,
आत्म ज्ञान के बिना
वस्तु भले ही
छूट जाये
या छोड़ दो
आकर्षण व
आसक्ति को
कम नहीं
किया जा सकता।
क्या बिना
प्रकाश के
अंधकार ने कभी
पलायन किया है?

तत्व दृष्टि

गायें भले ही विभिन्न
वर्णों की हों
किन्तु सभी के दूध का वर्ण
एक ही होता है
पुष्प चाहे किसी भी उपवन
के हों सभी में
गंध होती है
नीर किसी भी जलाशय का
हो, शीतलता तो होती ही है
अग्नि चाहे अपने घर की
हो या शत्रु के भवन की
वह तो जलायेगी ही
इसी तरह सत्यता, सर्वज्ञता,
वीतरागता, धर्मज्ञता
किसी की भी हो वह एक ही है,
सभी तीर्थंकरों की
वाणी एक ही है
हर जीव का पुण्य ही
उसका उत्थानक व पाप
ही पतन का कारण है
कर्म कभी पक्षपात नहीं करते।

अलिप्त

आकाश इतना
विशाल व
अनंत क्यों है?
क्योंकि वह सर्व
द्रव्य, गुण, पयार्यों
को समत्व के साथ
स्थान व अवगाहन देता है
स्थान देकर अहसान नहीं
जताता और न ही
वह किसी में
लिप्त होता है।
न किसी को
अपने में लिप्त करता है,
सदा-सदा अलिप्त ही रहता है
इसीलिए तो है
अमल, अनंत व स्वभाव में लीन
काश! मानव भी
ऐसा बन सके.....?

वासना की वास

जहाँ पर किंचित् भी
न वासना
की वास है
न किसी आश और
दास की प्यास है
निराश-हताश
और
उदारता भी
उदास है
उपासना का
उपहास नहीं
किन्तु उप-आस
ही प्रप्यास
प्रयासरत है वही गुण रास
निज वास, श्वास-विश्वास
विकास व प्रकाश
का होता है
स्थायी निवास-प्रवास।

यह प्रक्रिया है

मैंने
परमात्मा बनने
के मार्ग को
बहुत खोजा,
सुना, पढ़ा
अनुभव किया,
और
आगे भी बढ़ा।
किन्तु
अभी तक
परमात्मा नहीं बन
सका और
इस पद
दलित पाषाण को
कुशल शिल्पी ने
काट-छाँट कर,
तराश कर
एक रूप
दे दिया है। और लोग इसे पूजते हैं
परमात्मा के रूप में॥

क्या ये उचित है?

बड़ों के मुँह लगना,
उनसे बहस करना,
नीचा दिखाने का दुस्साहस
गर पाप है तो
छोटों को मुँह लगाना
उन्हें दवाब देकर धमकाना
उनकी अनैतिक जिदों को
पूरा करना
उनकी गलती को नजर अंदाज कर
उन्हें प्रोत्साहित करना भी
क्या अभिशाप नहीं है
सीमा से ज्यादा झुकना या
झुकाना, मुड़ना या मोड़ना
शाम–दाम–दण्ड–भेद
से कार्य सिद्ध कर लेना
गर अनीति नहीं
पाप तो अवश्य है ही
जो कभी अनुताप,
अभिशाप व संताप
का ही कारण होगा।

असलियत

जबसे हमने
अपने काँच
व पाषाण खण्डों को
हीरा आदि रत्न कहना
प्रारम्भ किया है,
तब से हमने
रत्न व हीरों
को तो पाया ही नहीं
साथ ही उन्हें पाने की
आस-प्यास
विश्वास को
भी खो दिया है।
अब मन इन
काँच खण्डों
को पाकर जो कुछ चाहता है,
वह भी
काँच-पत्थर
से ज्यादा
कुछ भी नहीं होंगे?
उन्हें छोड़े बिना॥

मौन भाषा

शब्दों में भावों को
पूर्ण व्यक्त करने की
सामर्थ्य नहीं है
वे जड़ हैं, पार्थिव हैं,
लिवास हैं, पोषाक हैं
असली तो आत्मा के भाव हैं
शब्दों की भाषा भववर्द्धक है
राग-द्वेष का कारण है
स्थूल अल्प-यद्वा-तद्वा
रूप-भाव,
पदार्थ, क्रिया के
दर्शायक हैं
संयोग-वियोग के हेतु हैं
क्या हम ऐसा
नहीं कर सकते कि मौन भाषा
का प्रयोग कर सकें
जिससे समस्त अनुभूतियों को
समस्त भावों को
समस्त दशाओं को
ज्यों की त्यों प्रकट
किया जा सके।

शक्ति शब्दों की

ये मैंने कब कहा कि
शब्दों में शक्ति नहीं है,
अरे! शब्दों में तो
अनंत को सीमित कर देने की,
सीमित को असीमित
रूप दिखाने की,
राग द्वेष में बदलने की,
द्वेष को मित्रता में ढालने की,
शांति को कलह रूप परिणमन करने की,
कलह अशांति; संक्लेशता को विशुद्ध रूप करने की,
शत्रु को मित्र व मित्र को शत्रु बनाने की,
योगी को भोगी, भोगी को योगी बनाने की,
वियोगी को नियोगी आदि दशा प्रकट करने की
शक्ति भी तो शब्दों मे पायी जाती है
जो संसार, मोक्ष, सुख-दुःख, राग-द्वेष, मोह,
निर्मोहिता, लाभ-हानि, हित-अहित
संक्लेशता व विशुद्धि में कारण है
ऐसे शब्दों की शक्ति को
कैसे नकारा जा सकता है?

जीवंत जीवन

आनंद के साथ क्षण-भर
की जिन्दगी जीना भी सार्थक है
क्योंकि चिदानंद के
साथ-साथ चेतना को जीवंत
रखने वाले प्राण होते हैं,
सत्यता, सुसंयम, धर्मज्ञता
अगाढ़ श्रद्धा, निस्वार्थ समपर्ण,
मैत्री, प्रमोद, वात्सल्य, उपकार
सहयोग, कृतज्ञता, सरलता, सहजता आदि।
किन्तु दुःख, संक्लेशता,
कलह, पाप, अवसाद, रोग
शोक, हिंसादि, कुकृत्य, क्रोधादि
दुर्भाव, विषय भोग आदि
दुर्वासनाओं से युक्त-कल्पकाल व
शताब्दियों का जीवन भी क्या
बेकार नहीं है?

धर्म साधना

धर्म का सही स्वरूप यही है
हम जैसे हैं वैसे ही दिखें,
न केवल बाहर से
अंदर से भी।
और सम्यक् साधना का
समग्र फल भी यही है,
हम जैसे बन सकते हैं
वैसे बन जायें,
एक बार ही, जिससे
फिर कभी बनने मिटने की
न कोई आवश्यकता रहे
और न ही पात्रता॥

याचना क्यों

परमात्मा से मांगना
क्या? उनके प्रति
अविश्वास करना नहीं है!
यदि तुम्हारा परमात्मा
सर्वज्ञ है तो माँगने की
क्या आवश्यकता?
वह तो सब-कुछ
जानता व देखता है,
और यदि, सर्वज्ञ नहीं है
तब भी ये सब माँगने
आदि की चेष्टा व्यर्थ है
क्योंकि वह तो परमात्मा
ही नहीं है।

सब कुछ है

न यहाँ कुछ है
न वहाँ कुछ है
अन्यत्र भी कहीं कुछ भी
नहीं है।
उसके लिए जिसने
निज अंतस् में कुछ
नहीं पाया है, और
जिसने निज अंतस् में
ही देखा है, जाना है
खोजा है, उसी ने पाया है
अपने निजी वैभव को
उसके लिए यहाँ, वहाँ
सर्वत्र सब कुछ है,
निस्सीम, अनन्त
सुखादि गुणों का कोश।

निर्मलता अंतस् की

मल से परिपूरित पात्रों
पर इत्र का छिड़काव,
मलिन लिवासों पर
पुष्पहार व आभूषणों
का धारण करना,
अप्रशस्त भावना व निंद्य
क्रियाओं से युक्त मर्त्य
समूह की घृत के दीपकों
से आरती करना क्या
व्यर्थ नहीं है?
बाह्य सौंदर्य अंतस् की
समग्र मलिनता का नाशक
कब बन सका है?
हाँ! यह बात अवश्य है
अंतस की निर्मलता ने बाह्य
मल का अवश्य ही
परिहार किया है,
न सही तुरन्त-कालांतर
में ही सही, तब क्यों
नहीं करते तुम अपना
अंतःकरण निर्मल करने का
बाह्य पुरुषार्थ॥

आसक्ति–निरासक्ति

कुसुमासक्त अलि
प्रदीपासक्त शलभ
रसनासक्त मीन्,
सुमधुर संगीतासक्त अहि व सारंग,
तथैव कामासक्त इभ,
यथा अपनी स्वतन्त्रता व
प्राणों की आहूति दे चुके हैं
यह तुम अच्छी तरह जानते ही हो
अतः यह भी सोच लो कहीं
तुम्हारी भी तो आसक्ति
ऐसी ही तो नहीं है
आसक्ति ही शोक है, दुःख है
बंधन है, अवरोध है
तथा निरासक्ति व विरक्ति है
निर्बाध व मुक्त सुख और
अनंतत्व की यात्रा॥

नश्वरता

पर्वत से गिरती नदी,
झंझावात हवा के मध्य
प्रज्वलित-दीप, तृणांकुरों पर
विद्यमान ओसबिन्दु,
जलाशय में उद्‌गमित बुद्‌बुद्‌,
गगन-गामिनी विद्युत,
वा शुक्र धनु, जगत में
नश्वर कहे जाते हैं,
किन्तु निजी अनुभव
अपनी निः शब्द भाषा में
उद्‌घोष करता है,
नहीं, इससे भी अधिक
क्षणध्वंसी नश्वर एवं विश्वास घातक है
धन, यौवन, जीवन
और सत्ता गत पुण्य।

जीवन की डायरी

जीवन की अनुपम डायरी में
प्रथम कवर पृष्ठ जन्म का
अंतिम कवर पृष्ठ मृत्यु के नाम
द्वितीय पृष्ठ में शैशव दशा के
ऊबड़-खावड़ धुंधले चित्र
उपांत पृष्ठ में है बृद्धत्व की
जीर्ण-शीर्ण दशा,
किशोरावस्था जवानी व प्रौढ़ावस्था के
पृष्ठों में क्या लिखा है तुमने
इसे पढ़ने के लिए ही
शायद मिला है यह जीवन॥

तू राह पर बढ़

हे आत्मन्!
तू घर से निकल, राह पर बढ़ तो सही
तुझे सहयोगी भी मिलेंगे।
वे साथ भी देंगे, कभी
अनुकूलताओं का चमन होगा
तो कभी प्रतिकूलताओं का अम्बार
किन्तु ध्यान रखना जो इन दोनों
के बीच नदी जैसा बहता है
वह सागर तक जाकर
सागर ही नहीं महासागर बन जाता है
अपने चरम साध्य अंतिम लक्ष्य
को प्राप्त कर लेता है, यदि तुम्हें
भी आत्मा के बीज को परमात्मा
का वृक्ष बनाना है तो उसे,
धर्म की भूमि में सच्चे देव,
शास्त्र, गुरु के निर्देशन में
समर्पित कर दे, तब तू
भी एक दिन वही होगा, जो वे हैं
जिन्हें अब कुछ भी नहीं बनना है
वे हो गये हैं, तू भी हो जायेगा
पहले होना सीख।

छोटे पंख वाले

एक चिड़िया ने एक छोटे से
बच्चे को उड़ने से मना किया,
किन्तु वह नहीं माना और
उड़ने की जिद करने लगा,
और अपनी माँ से आगे
निकलने की कोशिश करने लगा,
किन्तु कुछ दूर जाकर गिर गया
छोटे पंख वालों को
बड़े पंख वालों से
प्रतिस्पर्धा तो करनी
ही नहीं चाहिए
साथ ही बड़े पंख वालों
की बात भी मान लेना चाहिए
जिससे हित का मार्ग
अवरुद्ध न हो।

संकल्प

मैं अकेला ही चलूँगा
मंजिलों तक
मार्ग में मिलने वाले
वन–उपवन
नदी–नाले, जलाशय व झील
रेगिस्तानी टीले, हरित प्रदेश
घाटी, चोटी, कंदरा
अकथ समतल मैदान
कुसुम निर्मित पथ
या कांटों से आकृष्ट
पगदण्डी सब कुछ तो
छोड़ना है, मंजिल पाने के पूर्व
यदि मार्ग के अनुकूल
साधनों में राग और
प्रतिकूलताओं से विद्वेष
हो जायेगा तब तो मंजिल को
प्राप्त भी नहीं किया जा सकेगा
संयोगी निमित्तों को मित्र या
शत्रु मान राग द्वेष नहीं
अपितु सरिता की तरह दोनों
तटों के प्रति तटस्थ रह
गंतव्य पाने हेतु सतत् बढ़ना है
इसी से हो सकेगी
संकल्प की पूर्णता।

अपने–सपने

जब अपने–सपनों की तरह
टूटने लगते हैं, तब सपने
अपनों की तरह क्षण भर दिलासा
देकर, सांत्वना व सम्बोधन देकर
सुखद भविष्य की कल्पनाओं का
महल सजाकर, डूबते को
तिनके के सहारे की तरह
थाम लेते हैं, तब मुझे लगता है
क्या धक्का देकर गिराने वाले
अपनों की अपेक्षा
ये सपने श्रेष्ठ नहीं हैं?

गंतव्य का गंतव्य

आज तक अनंत गंतव्य बनाये
किन्तु वे गंतव्य आज तक
अंतिम गंतव्य तक न पहुँचा सके
सभी गंतव्य, मार्ग व कुमार्ग ही निकले
अब तो अंतिम गंतव्य व उद्देश्य यही है कि
अन्तिम गंतव्य को पा सकूं।
मैं कभी चार कदम चला
पुनः लौटा, कभी गिरा, कहीं उठा
कहीं टकराया, कभी गिराया व
भटकाया गया किन्तु आज तक गंतव्य
को नहीं पा सका, अहो! महानुभाव
यदि तुम गंतव्य को पा सके हो तो
मेरे गंतव्य प्राप्ति के पुरुषार्थ में
सहयोगी निमित्त बने
अभी तक मेरे सहयोगी वे ही बनें हैं
जिन्होंने सम्यक् गंतव्य का चयन ही नहीं
किया, किन्तु जब मैं अकेला होता हूँ
तब सोचता हूँ, मेरा गंतव्य तो मैं ही हूँ
पथ व पथिक मैं ही हूँ
विधि-विधान व समस्त साधन
साध्य भी तो मैं ही हूँ
तब पर की आवश्यकता
ही कहाँ है?

सहज साध्य

मस्तिष्क की मटकी में
शब्दों के सघन दधि को
स्याद्वाद और नय विवक्षा की
मथानी से जब मथकर
प्राप्त की, वह चिन्तन-मनन की-
सम्यक् फल श्रुति।
नवनीत सम अनुभव की, अनुपम
स्वकीय प्राकृतिक
सहज साध्य
शाश्वत उपलब्धि॥

लकीर

अतीत, मुर्दा है, भूत है
स्मृति मात्र है, उसे छोड़ो।
अनागत, अजन्मा है,
मात्र कल्पना जाल है,
अनिश्चित है
उससे भी नाता तोड़ो॥
गर बनना चाहते हो वर्धमान
तो देखो-जो सामने है
वर्तमान-प्रवर्तमान उसी से
नाता जोड़ो, क्योंकि अनुभूति,
प्रतीति, संवित्ति वर्तमान में ही होती है
भूत तो भूत है, लकीर है, पद चिन्ह हैं
गुजरे राही के।
और भविष्य है सुदूर वर्ती
आकाश में टूटता हुआ तारा।

मानवता की तस्वीर

महावीर एक फकीर ही नहीं,
शिव मार्ग के वीर भी थे
मात्र पराक्रमी ही नहीं, करुण पूरित नियमों के नीर भी थे।
वे अनुभूति के निस्सीम सागर ही नहीं,
भव निधि के तीर भी थे॥
वे कर्मों के जलाने वाले
ध्यान के वैश्वानर ही नहीं
आनन्द के वीर भी थे।
वे स्वयं के दृष्टा व सृष्टा ही नहीं
मानवता की तस्वीर भी थे।
अपने भाग्य की नियति ही नहीं
चन्दना जैसे भक्तों की तकदीर भी थे
वे श्रद्धा के प्राण तंतु ही नहीं
किसी अंकिचन की निष्ठा के चीर भी थे।
महावीर
एक फकीर ही नहीं शिव
मार्ग के वीर भी थे॥

क्या होता है खतरनाक?

कर्ता ही भोक्ता होता है, था, रहेगा
व्यवहार का व्यवहार से, निश्चय का निश्चय से
शुद्ध निश्चय का शुद्ध निश्चय से
जो अकर्ता है वह अभोक्ता ही है
था और रहेगा, अभोक्ता कभी कर्ता नहीं होता
कर्ता कभी अभोक्ता नहीं होता
इस ऋजु समीकरण को अच्छी तरह समझ कर
बदल लो अपनी मिथ्या धारणाओं को
जीर्ण वस्त्रों की तरह या शीर्ण भवन की तरह
जीर्ण-शीर्ण भवन कभी भी गिर कर
तुम्हें धाराशायी कर सकता है
क्योंकि वह भी कुज्ञान (अज्ञान) की तरह
अति खतरनाक होता है।

धर्म का अपमान

माना कि तुम्हारा विचार सम्यक् है
किन्तु तुम मेरे विचार को
मिथ्या कैसे ठहरा सकते हो?
विचार तो विचार है
तुम्हारे सोचने का दृष्टिकोंण पृथक् है
मेरा दृष्टि कोंण आप से भिन्न है
दोनों दृष्टिकोंण भी तो सम्यक् हो सकते हैं
तब आप क्यों अपनी बात को
श्रेष्ठ कहना चाहते हैं?
क्या दूसरे की वार्ता या विचार को
नकारना अनेकान्त धर्म का अपमान नहीं है?

ये अन्याय है

संसार में कोई किसी का
न कर्ता है न भोक्ता
न ही कोई एक दूसरे का भाग्य विधाता है
प्रत्येक प्राणी अपने–अपने
कर्म के निर्माता हैं।
और अपने–अपने भाग्य विधाता
प्रत्येक प्राणी जिम्मेदार हैं
सुख और दुःख का
अपने दुःख के लिए दूसरे को दोषी
ठहराना अनुचित ही नहीं धर्म
के प्रति, उस व्यक्ति के प्रति
अन्याय भी है, जो पाप ही नहीं
अपराध भी है और आप जानते ही हैं
अपराधी दण्ड का पात्र है, था और रहेगा
अतः तुम स्वयं को स्वयं के लिए
कर्ता, धर्ता, भोक्ता व भाग्य विधाता
नियंता और त्राता मानो॥

इस युग का भगवंत

जो है निर्मोही अनासक्त,
भव तन व भोगों से विरक्त,
गुणों व स्वभाव में अनुरक्त,
राग द्वेष से हीन
आत्म ध्यान में लीन, शास्त्र प्रवीण,
पाप क्षीण, महान विचारक,
धर्म प्रचारक, संयम साधक,
निज आराधक, कर्म मल हारक,
स्व पर उपकारक, तत्व प्रबोधक,
आत्म शोधक, चैतन्य गुण भोगी,
सम रसिक योगी, सर्वस्व त्यागी,
गुणानुरागी, वही है ईश्वर,
परम महीश्वर, आदर्श संत,
इस युग का भगवंत॥

अग्नि स्नान

चाहे मृत कुंभ हो या स्वर्ण कलश,
भोजन सामग्री है या खेत की फसल,
बिना अग्नि परीक्षा दिये
कोई साधक नहीं बन सकता महान।
कुन्दन सम शुद्ध बनने हेतु अग्नि परीक्षा
देना तो प्रत्येक महापुरुष का
कर्तव्य है और कसौटी भी
इसलिए अग्नि स्नान को ही
कहा है पूर्ण व
अंतिम स्नान॥

प. पू. उपाध्याय श्री १०८ निर्णय सागर जी महाराज
द्वारा रचित, संपादित एवं निर्ग्रंथ ग्रंथमाला द्वारा प्रकाशित साहित्य

1. निज अवलोकन
2. देशभूषण कुलभूषण चरित्र
3. हमारे आदर्श
4. चित्रसेन पद्मावती चरित्र
5. नंगानंग कुमार चरित्र
6. धम्म रसायण
7. मौनव्रत कथा
8. सुदर्शन चरित्र
9. प्रभंजन चरित्र
10. सुरसुन्दरी चरित्र
11. जिनश्रमण भारती
12. सर्वोदय नैतिक धर्म
13. चारुदत्त चरित्र
14. करकण्डु चरित्र
15. रयणसार
16. नागकुमार चरित्र
17. सीता चरित्र
18. योगामृत भाग-1
19. योगामृत भाग-2
20. आध्यात्मतरंगिणी
21. सप्त व्यसन चरित्र
22. वीर वर्धमान चरित्र भाग-1
23. वीर वर्धमान चरित्र भाग-2
24. भद्रबाहु चरित्र
25. हनुमान चरित्र
26. महापुराण भाग-1
27. महापुराण भाग-2
28. योगसार-भाग-1
29. योगसार-भाग-2
30. भव्य प्रमोद
31. सदार्चन सुमन
32. तत्वार्थ सार
33. कल्याण कारक
34. श्री जम्बूस्वामी चरित्र
35. आराधना सार
36. यशोधर चरित्र
37. व्रतकथा संग्रह
38. तनाव से मुक्ति
39. उपासकाध्ययन भाग -1
40. उपासकाध्ययन भाग -2
41. रामचरित्र भाग-1
42. रामचरित्र भाग-2
43. नीतिसार समुच्चय
44. आराधना कथा कोश भाग-1
45. आराधना कथा कोश भाग-2
46. आराधना कथा कोश भाग-3
47. दशामृत
48. सिन्दूर प्रकरण
49. प्रबोध सार
50. शान्तिनाथपुराण भाग-1
51. शान्तिनाथ पुराण भाग-2
52. प्रश्नोत्तर श्रावकाचार
53. सम्यक्त्व कौमुदी

54. धर्मामृत भाग-1
55. धर्मामृत भाग-2
56. पुण्य वर्द्धक
57. पुण्यास्रव कथा कोश भाग-1
58. पुण्यास्रव कथा कोश भाग-2
59. चौंतीस स्थान दर्शन
60. अमरसेन चरित्र
61. सार समुच्चय
62. दान के अचिन्त्य प्रभाव
63. पुराण सार संग्रह भाग-1
64. पुराण सार संग्रह भाग-2
65. आहार दान
66. सुलोचना चरित्र
67. गौतम स्वामी चरित्र
68.महीपाल चरित्र
69. जिनदत्त चरित
70. सुभौम चक्रवर्ती चरित्र
71. चेलना चरित्र
72. धन्यकुमार चरित्र
73. सुकुमाल चरित्र
74. कुरल काव्य
75. धर्म संस्कार भाग-1
76. प्रकृति समुत्कीर्तन
77.भगवती आराधना
78. निर्ग्रंथ आराधना
79. निर्ग्रंथ भक्ति
80. कर्मप्रकृति
81. पूजा-अर्चना
82. नौ-निधि
83. पंचरत्न
84. व्रताधीश्वर-रोहिणी व्रत
85. तत्वार्थस्य संसिद्धि
86. रत्नकरण्डक श्रावकाचार
87. तत्त्वार्थ सूत्र
88. छहढाला (तत्त्वोपदेश)
89. छत्रचूड़ामणि(जीवंधर चरित्र)
90. धर्म संस्कार भाग-2
91. गागर में सागर
92. स्वाति की बूँद
93. सीप का मोती
(महावीर जयन्ती प्रवचन)
94. भावत्रयफल प्रदर्शी
95. सच्चे सुख का मार्ग
96. तनाव से मुक्ति-भाग-2
97. कर्म विपाक
98. अन्तर्यात्रा
99. सुभाषित रत्न संदोह
100. अरिष्ट निवारक विधान संग्रह
101. पंचपरमेष्ठी विधान
102. श्री शांतिनाथ भक्तामर, सम्मेदशिखर विधान
103. मेरा संदेशा
104. धर्म बोध संस्कार 1,2,3,4
105. सप्त अभिशाप
106. दिगम्बरत्व: क्या, क्यों, कैसे?
107. जिनदर्शन से निजदर्शन
108. निशा भोजन त्याग: क्यों?
109. जलगालन: क्या, क्यों, कैसे?
110. धर्म: क्या, क्यों, कैसे?
111. श्री महावीर भक्तामर स्तोत्र